# टूटे पंखों से परवाज़ तक

सुमित्रा महरोल

**सुमित्रा महरोल**

जन्म : दिल्ली, 21 जून 1965

शिक्षा : एम. फिल., पी-एच.डी. (हिन्दी) दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

प्रकाशन : नागार्जुन और अमृतलाल नागर के उपन्यासों पर पुस्तकें प्रकाशित। हंस, कथादेश, अन्यथा, युद्धरत आम आदमी, पाखी, वयान, संघर्ष, प्रेरणा, परिन्दे, भाषा, अनिश इत्यादि हिन्दी की राष्ट्रीय स्तर की पत्रिकाओं में कहानियाँ, कविताएँ, लेख और समीक्षाएं प्रकाशित। आल इंडिया रेडियो, दिल्ली से कहानियाँ, वार्ताएँ और परिचर्चाएं प्रसारित।

सम्प्रति : श्यामलाल महाविद्यालय (सान्ध्य) शाहदरा, दिल्ली के हिन्दी विभाग में एसोसिएट प्रोफेसर।

निवास : डी-160 ग्राउंड फ्लोर, रामप्रस्थ कॉलोनी, गाजियाबाद (उ.प्र.)



The Marginalised Publication

₹ 290

eBook

ISBN 978-93-87441-44-6

# टूटे पंखों से परवाज तक

# टूटे पंखों से परवाज तक

सुमित्रा महरोल

The Marginalised Publication

**प्रकाशक** : द मार्जिनलाइज्ड पब्लिकेशन
डी-22, रामलीला पार्क के पास
पांडव नगर, दिल्ली-110092
पंजीकृत कार्यालय, सानेवाड़ी, वर्धा
महाराष्ट्र-442001
**ईमेल** : themarginalised@gmail.com
**संपर्क** : +91-8130284314, 9650164016

© द मार्जिनलाइज्ड

**प्रथम संस्करण** : 2021
**आईएसबीएन** : 978-93-87441-44-6 (अजिल्द)
**कवर** : हिम्मत सिंह,
**लेआउट** दिनेश कुमार
**मुद्रक** : विकास कंप्यूटर एंड प्रिंटर्स, नवीन शाहदरा
दिल्ली-110032

**टूटे पंखों से परवाज तक**
सुमित्रा महरोल

**TUTE PANKHON SE PARWAZ TAK**
by SUMITRA MEHROUL

# भूमिका

हाशिए पर रहने की पीड़ा और त्रास को एक से अधिक स्तरों पर मैंने झेला। एक से अधिक कारण मौजूद थे मुझे उपेक्षित अपमानित करने को, मेरे आत्मविश्वास को रौंद, दीन-हीन स्थितियों में पड़े रहकर, विवश भाव से दूसरों की दया पर जिन्दगी बसर करने को... मगर मुझे यह जिन्दगी स्वीकार न थी। स्थितियों से समझौता करने के बजाय मैंने संघर्ष का, कर्मठता का, लगन का, जिंदादिली का रास्ता चुना, चाहे दशाओं उसमें कितनी ही बाधाएं क्यों न थीं।

स्त्री, दलित व शारीरिक विकलांग इन तीनों दशाओं को मैंने एक साथ झेला। दलित और स्त्री होने की वजह से विषमतामूलक स्थिति में पड़े रहने के कारणों का विश्लेषण कर समाज व व्यवस्था को उत्तरदायी ठहराया जा सकता है, पर विकलांगता के लिए किसे कटघरे में खड़ा किया जाए–नियति को, प्रकृति को या हालात को। बहुत मुश्किल होता है अपनी अपूर्णता के साथ जीना। अपनी जिजीविषा से आप विकलांगता पर विजय प्राप्त कर भी लें, पर समाज कभी आपको समानता का दर्जा नहीं देगा। कदम-कदम पर आईना दिखा कर कहता रहेगा कि आप अपूर्ण हैं उनके समान नहीं।

अतीत में जाकर आत्मकथांश लिखना इतना आसान नहीं, क्योंकि उन त्रासपूर्ण पीड़ादायी स्थितियों को दोबारा जीना पड़ता है। अतीत में घटी वे दुखद घटनाएं आज भी उतनी ही पीड़ादायी हैं। कुछ प्रसंगों को लिखते हुए आज भी मेरी आंखें तब ही की भांति निरंतर बहने लगती हैं। सुखद यह है कि अंधड़ों से भरे तपते रेगिस्तान के समान उस समय को पार कर

आज मैं हरी-भरी तलहटी में हू इस परवाज़ में अपने टूटे पंखों को बाधा मैंने नहीं बनने दिया।

यह आत्मकथा तीन वर्ष पहले ही लिख ली गई थी, पर इसे प्रकाशित करने के उद्देश्य से किसी भी प्रकाशक से भेंट कर पाना संभव नहीं हो पा रहा था–कारण अनेक थे–दरियागंज जैसे सघन इलाके में दिल्ली के ट्रैफिक से जूझते हुए पहुंच पाने की हिम्मत नहीं जुटा पा रही थी, कुछ मेरा आलस्य भी था। पुस्तक लिख तो ली थी, पर प्रकाशन को लेकर उत्साहित नहीं थी। इस संदर्भ में अरुण कुमार जी का हार्दिक आभार प्रकट करती हूं कि उन्होंने आगे बढ़कर इसे प्रकाशित कराने में मुझे सहयोग प्रदान किया। टाइप करवाने से लेकर प्रकाशक ढूंढ़ने, उससे बात करने तक की सारी जिम्मेदारी उन्होंने उठा ली। दिनेश जी ने घर से ही पांडुलिपि ली और टाइप करके प्रूफ पढ़ने के लिए पुनः घर पर ही मुझे वापस कर दी। इस पुस्तक को प्रकाशित करने के लिए संजीव चंदन जी को कोटिशः धन्यवाद!

**–सुमित्रा महरोल**

दिल्ली